संस्कृत वांग्मय में सर्वजनहित की भावना

–रिचा माथुर एवं प्रो.(डॉ.) अभिषेक दत्त त्रिपाठी*
शोधछात्रा–संस्कृत
अध्यक्ष, (संस्कृत विभाग) का.सु.साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय–अयोध्या

संस्कृत वांग्मय में सभी जीव , जन के हित की भावना प्रकट होती है वैदिक वांग्मय में तो सर्वजनहित के लिए प्राचीनकाल से भारतीय धरातल पर प्रणीत वेद वांग्मय धरती पर मानवमूल्यों की सुदृढ़ आधारशिला रख चुका है जिसके आधार पर हमारी भव्य संस्कृति की अट्टालिका अपनी पूर्ण गरिमा के साथ खड़ी है हमारे चारों वेद , एक सौ आठ उपनिषद , नाटक महाकाव्य एतिहासिक काव्य मनुष्य को अपने गंतव्य की ओर इस तत्परता के साथ अग्रसर होने की प्रेरणा देते है कि उससे कही भी कोई भी त्रुटि न हो जाये। मानव जीवन हित के लिए आचरणीय सूत्रों को स्वीकार कर उस पर चलने की आवश्यकता है इन आचरणीय सूत्रों के समाहार स्वरूप के अन्तर्गत धर्माचरण, परोपकार, दानशीलता, सत्य वचन, निष्काम सेवा, त्याग, शांति अहिंसा, सौहार्द्र भावना इत्यादि आते है इन सभी का वर्णन सम्पूर्ण संस्कृत वांग्मय में कई शताब्दियों पूर्व हुआ है इन सभी के अभाव में मनुष्य का जीवन एक बंजर भूमि के समान है। इन सभी को मानव अपने जीवन में अपनाकर जीवन को सार्थक बना सकता है–

हरिः ऊँ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते '
पूर्णस्य पूर्ण मादाय पूर्णमेवाव शिष्यते "

यह मंत्र यह बतलाता है कि किस प्रकार का आचरण करने से मनुष्य कर्मफल से अलिप्त रह सकता है हमें ऐसा मानना चाहिए कि समस्त जगत् में ईश्वर भीतर और बाहर व्याप्त है। समस्त जगत् उसकी अभिव्यक्ति है ऐसी अवस्था में एक वस्तु को पसन्द करने और दूसरी को नापसन्द करने का प्रश्न ही नहीं उठ सकता, इसलिए जो कुछ यदृच्छया उपलब्ध हो जाए, उसका त्याग के द्वारा असंग भाव से उपभोग करना चाहिए और इस मंत्र के द्वारा यह भी उपदेश दिया गया है कि किसी के धन के प्रति लालच मत करो यदि ध्यान से देखा जाए तो 'कस्यस्विद्धनम् इन्द्रियों के धन विषय है : अतः हमें उनमें लिप्त नहीं रहना चाहिए जो मनुष्य समस्त प्राणियों को आत्मा रूप में ही देखता है और आत्मा को समस्त प्राणियों में देखता है तो वह किसी से घृणा , ईर्ष्या नहीं करता ।

श्रीमद् भगवद्गीता में जनहित के लिए यह श्लोक आया है **यथा** –

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिर पैशुनम् ।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं हीरचापलम् ।।

मनुष्य को अहिंसा, सत्यभाषण, क्रोध न करना, संसार की कामना का त्याग, अन्तःकरण में राग द्वेष जनित हलचल का न होना, चुगली न करना, प्राणियों पर दया करना, सांसारिक विषयों में न ललचाना, अन्तःकरण की कोमलता, अकर्त्तव्य करने में लज्जा तथा चंचलता का अभाव होना चाहिए।

संस्कृत में प्रणीत हमारा सम्पूर्ण वांग्मय वेदों, उपनिषदों, नाटक, महाकाव्य आदि के रूप में विद्यमान है इसी संस्कृत वांग्मय में हमारे जीवन को सार्थक बनाने के सभी उपक्रम, मानव मूल्यों का उल्लेख है, परोपकार और निष्काम सेवा करने के लिए जीवन एवं शरीर की प्राप्ति हुई है न कि भोग करने के लिए इस संदर्भ में प्रकृति का उदाहरण दिया जा सकता है प्रकृति मानव जीवन पर परोपकार एवं सेवा करती है यथा –

परोपकाराय फलन्ति वृक्षः परोपकाराय वहन्ति नद्यः ।

परोपकाराय दुहन्ति गावः, परोपकारार्थमिदम् शरीरम् ।।

कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तल में कण्व के आश्रम में रहने वाली शकुन्तला भी प्रकृति प्रेमी है कण्व ऋषि सहित सभी आश्रमवासी, आश्रम के वृक्षों , लताओं , पौधों , मृगों के साथ एक अनोखा प्रेम और गहरा सम्बन्ध है शकुन्तला वनज्योत्सना को अपनी सहेली मानती है जब लताओं पर पुष्प खिलता है तो वह खुश होकर उत्सव मनाती है मृग के बच्चे को अपने बच्चे की तरह पालन – पोषण करती है शकुन्तला वृक्षों को जल दिए बिना खुद जल गृहण नहीं करती, शकुन्तला को प्रकृति से इतना स्नेह है कि शकुन्तला की विदाई होने पर प्रकृति भी अपना दुःख
प्रकट कर रही थी।

पातं न प्रथमं व्यवस्यति जलं युष्मास्वपीतेषु या
नादत्ते प्रियमण्डनाऽपि भवतां स्नेहेन या पल्लवम् ।
त्राधे वः कुसुमप्रसूति समये यस्या भवप्युत्सवः
सेयं याति शकुन्तला पतिगृहं सर्वैरनुज्ञायताम् ।।

कालिदास के अभिज्ञान शाकुन्तलम् में कण्व ऋषि के आश्रम में निवास करने वाले जीव – जन्तु और आश्रमवासियों के बीच प्रेम और त्याग की झलक देखने को मिलती है सभी जन के हित में कई बातें उल्लेख है उदाहरण के लिए चतुर्थ अंक का वह स्थल लिया जा सकता है जहाँ अनसूया प्रियंवदा से कहती है कि दुर्वासा के शाप की बात शकुन्तला के कानों तक नहीं पहुँच सके। , यह सुनकर प्रियंवदा कहती है – **कः इदम्नीमुष्णोदकेन नवमल्लिका सिंचति !** कौन इस समय गरम पानी से नवमल्लिका नाम की लता को सींचेगा अर्थात् वैसे भी पहले से शकुन्तला दुष्यन्त के हस्तिनापुर जाने पर दुखी है यदि शकुन्तला को शाप मिलने की बात पता चली तो वह उसके लिए असहनीय हो जाएगा जहाँ दूसरी ओर देखा जाए तो शकुन्तला कण्व की पुत्री नहीं है उसके बाद भी कण्व शकुन्तला के सुखमय जीवन की प्रार्थना हेतु सोमतीर्थ गऐ , शकुन्तला विश्वामित्र और मेनका की पुत्री है वह कण्व द्वारा पालित – पोषित है ! कण्व ऋषि आश्रम के शिष्यों से परिवार जनों की भाँति प्रेम करते है शकुन्तला के पशुओं को भोजन देकर ही खुद भी भोजन गृहण करती है । शकुन्तला और उसके साथ रहने वाले सभी जीव – जन्तु सुख – दुःख में एक दूसरे का साथ देते है। शकुन्तला जब हमेशा के लिए हस्तिनापुर दुष्यन्त के पास जाती है तब ऋषि कण्व तपोवन के जीव – जन्तु , वृक्षो तथा लताओं से विदाई के लिए कहते है अर्थात् बुलावा भिजवाते है कि बेटी की विदाई पर सभी मिलने आए सभी वृक्ष , वनज्योत्ना कुछ न कुछ उपहार देते है तथा मृगों ने खाना खाना छोड़ दिया एवं मृग के बच्चे का शकुन्तला का आँचल पकड़ लेना यह सभी चीजें दर्शाती है कि यह प्रकृतिमात्र नहीं है उनके परिवारजन है वह एक दूसरे के लिए बहुत महत्व रखते है प्रकृति का इतना सुंदर सजीव चित्रण तो कालिदास ही कर सकते है ! इस नाटक में आपस में एक – दूसरे के हित के लिए तपोवनवासी समर्पित रहते है।

शिवराजविजय में भी अम्बिकादत्त व्यास जी ने सर्वजनहित का उल्लेख किया है इस एतिहासिक गधकाव्य में शिवाजी मुस्लिम शासकों के अत्याचारों से उद्विग्न होकर स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते है। शिवराजविजय में देशभक्ति, धर्म की रक्षा की भावनाएँ समन्वित है इस गधकाव्य के आरम्भ मे गौरवटु नाम के आश्रमवासी शिष्य ने एक यवनयुवक से कन्या को बचाया , यवन युवक सात वर्षीय कन्या का अपहरण करके ले जा रहा था तभी गौरवटु और श्यामवटु ने उन यवनों का वध करके कन्या को उनके माता – पिता के पास पहुँचाया ।

वाल्मीकि रामायण के उत्तरकाण्ड में भी सर्वजनहित की झलक दिखाई पढ़ती है। रामायण में प्रजा के हित में राम राज्य में राजा और प्रजा में समानता और विचार स्वातंत्र का अधिकार सबको प्राप्त था इसमें धोबी समाज के एक व्यक्ति की पत्नी दो रात गायब थी। धोबी ने उसे स्वीकार न करने की

बात राजा राम के सामने रखी और कहा कि दुश्मन के घर में रही हुई पत्नि को मैं स्वीकार नहीं करूंगा और यह कहकर सीता जी पर संदेह किया ! राम ने राजा और प्रजा का न्याय करने के लिए अयोध्या वासियों के इस संदेह के समाधान के लिए मर्यादा पुरूषोत्तम राम ने सीता का त्याग किया इस महाकाव्य मे यह बताया गया है कि राजा का जितना अधिकार प्रजा पर होता है प्रजा का भी उतना ही अधिकार राजा पर होता है। यहाँ पर साफ – साफ दिखाया गया है कि राम ने प्रजा के लिए इतना बड़ा त्याग किया ! रामायण में भरत और लक्ष्मण का उदाहरण देते हुए कहा गया कि

'सवेया मानवानाच कृतज्ञो भरतो भवत्
मधवश्यैव सेवाच कृतज्ञो लक्ष्मणो भवत् ।'

भाई की आज्ञा होने पर भरत ने जनता की सेवा की और लक्ष्मण ने स्वयं माधव की सेवा की इस प्रकार दोनों भाइयों ने बड़े भाई के प्रति सेवा भावना की विशिष्टता का निरूपण किया। माता कौशल्या ने राम से अपने धर्म का आचरण करने का उपदेश देते हुए कहती है कि हे राम । तुम जिस धर्म का आचरण करोगे वही तुम्हारी रक्षा करेगा यहाँ पर धर्माचरण को संसार में अत्यंत प्रभावपूर्ण माना गया है। वचन पालन को यदि भारतीय संस्कृति का प्राणतत्व कहा जाये तो यह अतिश्योक्ति पूर्ण नहीं होगा इस धरती पर सदियों से वचन पालन को जीवन से भी अधिक महत्व दिया है।

'रघुकुल रीति सदा चलि आइ
प्राण जाय पर वचन न जाई ।।'

महाभारत में वर्णित कारिका से ज्ञात होता है कि महाराज रन्तिदेव ने महाविष्णु के प्रकट होने पर उनसे मोक्ष न माँगकर जनता की सेवा करने की शक्ति प्रदान करने का वरदान माँगा था

सेवा धर्ममिदम् सर्वम् ब्रोच्यते शास्त्र सम्मतम्
रंतिदेवो यथा सेवाम् अकरोत सर्वधा सदा ।।'

धर्म शब्द का अर्थ किसी मजहब के लिए न होकर मात्र 'कर्त्तव्य पालन' के अर्थ में हुआ है , महाभारत के वन पर्व मे एक शुद्र धर्मव्याध का आख्यान उल्लिखित है, जो मांस विक्रय का पेशा करता था परन्तु उसने ब्राहम्ण कौशिक को उपदेश दिया और सिद्ध कर दिया कि 'संसार' में स्वधर्माचरण से श्रेष्ठतम तथ्य अन्य कुछ नहीं है , जिसका आचरण ही मनुष्य के लिए परमोत्कृष्ट धर्म है '

'जन्म संस्कार मात्रेण धर्म मार्ग प्रवर्तकः
उपदेश् कौशिकाय धर्मव्याधो भवन्तदा ।। '

संस्कृत वांग्मय में सत्य को सबसे अधिक महत्व दिया जाता है असत्य को महापाप की श्रेणी में रखा गया है मनुष्य को सत्य बोलना चाहिए , ऋतु का अभिमान की निन्दा की गई है , मनुष्य को अभिमान, अहंकार नहीं करना चाहिए क्योंकि यह पराभव का कारण होता है।

वैदिक वांग्मय में वेदों में सर्वजनहित के लिए कई मंत्रों और प्रार्थनाओं का उल्लेख दिया गया है ऋग्वेद में ज्ञान की महत्ता का प्रतिपादन किया गया , ईश्वर ने वेदों का ज्ञान ऋषियों को प्रदान किया इसी कारण ऋषियों को मंत्रों का द्रष्टा कहा गया इन ऋषियों ने गुरू – शिष्य परम्परा का निर्वाह करते हुए इन मंत्रों को अपने शिष्यों को दिया , उन्होनें यह ज्ञान देकर शिष्यों का हित किया है। कुछ ऐसी प्रार्थनाएँ ऋग्वेद और यजुर्वेद तथा अथर्ववेद में देखने को मिलती है जो सभी प्राणियों के हित के लिए विशेष रूप से हितकारी है।

वेदों में बहुत सारी उपयोगी बातों का वर्णन है जैसे कि यजुर्वेद में वर्णित मानव के जीवन को यज्ञमय बनाने का महत्व दिया गया है धरातल के प्राणियों की रक्षा हेतु यज्ञ विधि तथा मंत्रों का वर्णन है वहीं अथर्ववेद में मानव की शारीरिक और मानसिक व्याधियों, बीमारियों को दूर करने के उपाय तथा चिकित्सा विधि तथा औषधियों का उल्लेख किया गया है अथर्ववेद में विभिन्न प्रकार की चिकित्सा करने की पद्धियों का विधान है इसमें सभी प्रकार के रोगों का निवारण करने का उपाय दिया गया है यह

एक उदाहरण है मानव तथा अन्य प्राणियों के हित के लिए , चरक संहिता में औषधि चिकित्सा के अतिरिक्त दीर्घ आयु की प्राप्ति के लिए मंत्र , रक्षा कवच का मंत्र , मणियों और विशेष प्रकार की औषधियों की चिकित्सा वर्णन है जो मानव जीवन के लिए विशेष प्रकार से उपयोगी है अथर्ववेद में अनेक प्राकृतिक पदार्थ रोग निवारक कहे गये है जिसमें पृथ्वी , जल , अग्नि, वायु , सूर्य आदि ।

येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीरा :।
यदपूर्व यक्ष्मन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसङ्कल्पमस्तु ।।

जिस मन के द्वारा कर्मो में लगे रहने वाले ऋषि तथा धीर पुरूष यज्ञों में उत्तम कार्य करते है जो मन प्राणियों का भीतरी रहस्य है वह मेरा मन सात्विक विचारों वाला कल्याणकारी हो , मेरा मन शुभ – कल्याणकारी हो ।

इस लोक में कर्म करते हुए सौ वर्ष जीने की इच्छा करें इस प्रकार मनुष्य कर्मजन्य , सुख दुःख , आशा – भय आदि संस्कारों से लिप्त न हो सकेगा । सौ वर्ष की आयु मनुष्य की औसत आयु मानी गई है , उसे कर्म करते हुए ही पूर्ण करना चाहिए प्रवृत्ति मार्ग से कल्याण प्राप्ति का इससे बढ़कर सबूत और क्या हो सकता है। सच बात तो यह है कि शुक्ल यजुर्वेद का दर्शन आशावार्द , है उसके छत्तीसवें अध्याय में पूरे सौ वर्ष तक जीने का आनन्द लेने की प्रार्थना की गई है

कुर्वत्रेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे ।।

हम सौ वर्ष तक जीते रहे हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ सौ वर्ष तक काम करती रहे हम सभी सौ वर्ष तक ज्ञान का संचय करते रहे । **'पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं श्रृणुयाम शरद : प्रव्रवाम शरद : शतमदीनाः स्याम शरद : शतम ।।**

प्राणियों के हित में यह भी स्वीकार किया गया है कि मानव के लिए त्याग भावना अत्यन्त सहज होनी चाहिए क्योंकि श्वास और आहार की भाँति सब कुछ स्वीकार करने के उपरान्त यदि श्रीर उनका किसी न किसी रूप में परित्याग नहीं करता है तो वह उस शरीर के लिए हानिकारक हो जाता है इसलिए हम जो कुछ भी संचित करते है उनका त्याग भी अनिवार्य है , जब हम अपनी आवश्यकताओं को भूलकर , जरूरत मन्दों का उपहार करते है तो उसे ही 'त्याग भावना' कहा जाता है।

कठोपनिषद् में दिया गया है कि कर्म संतान अथवा धन के माध्यम से अमृतत्व की प्राप्ति नहीं होती , केवल त्याग के माध्यम से ही इसे प्राप्त किया जा सकता है यथा –

' न कर्मणा न प्रजया धनेन ।
त्यागेनैकेन अमृतत्व मानसु : '।।

सर्वजनहिताय विषय में प्रयुक्त आचरणीय जीवन मूल्यों को अपने व्याक्तत्व में ढालने पर मानव को पूर्ण शान्ति प्राप्त होती है क्योंकि भारतीय जीवन – दर्शन संतुष्टि और मानसिक शान्ति में ही परमानन्द को निहित मानता आ रहा है। संप्रति अर्वाचीन जीवन में व्यक्ति समस्त सम्पदाओं के होते हुए भी जिस शून्यता को महसूस करता है , वह यदि उससे मुक्त होना चाहता है , तो उसके लिए जीवन मूल्यों व आदेर्शों को पूर्ण निष्ठा से अपनाने के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प नहीं है। अमृत बिन्दोपनिषद् में स्पष्ट लिखा है –

मनयेव मनुष्याणाम् कारणम् बन्ध मोक्षयो :
बन्धाय विशयासक्तम् मुक्त्यै निर्विषयम स्मृतम् ।
मनस्सशान्तिरेवश्यात् मानवानाम् विशेषतः
शिवम् चैव शुभम् भूयात लौकिके पारलौकिके ।।
'ऊँ ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किच जगत्यां जगत् ।
तेन त्यक्तेन भुजीथा मा गृथ : कस्यस्विद्धनम् ।।'

ऐसा कहा गया है कि इस संसार में जो कुछ भी है चाहें वो जड़ हो या चुतन उन सब पर ईश्वर का ही अधिकार है हर कोई वस्तु ईश्वर द्वारा ही उत्पन्न की गई है एवं उनके द्वारा ही नष्ट की जाएगी तो हम इन सभी वस्तुओं का त्याग भाव से उपयोग करना चाहिए , किसी व्यक्ति के पास वह वस्तु नहीं है जो हमारे पास हैं तो हमें उसकी मदद करके उसको वस्तु बाँटकर मदद करना चाहिए ,हर मनुष्य इस प्रकार बाँटे कि हर कोई व्यक्ति के लिए वह वस्तुऐं उन्हे भी प्राप्त हो सके और पराये धन का लालच किए बिना जीवन यापन करना चाहिए यदि देखा जाए तो आधे से ज्यादा झगड़े , लड़ाइयाँ धन को लेकर ही है व्यक्ति दूसरे का धन हड़पने में लगे रहते है उसके लिए उसे बिना कर्म किए दूसरों का धन अर्जित करने की पड़ी रहती है यदि हर मनुष्य यह समझ ले कि वह धन न तो हमारा है और जिससे हड़पने की इच्छा कर रहा है वह उसका भी नहीं है यह तो ईश्वर का है सभी वस्तुएँ ईश्वर की है तो वह किसी ओर के धन की इच्छा न करते हुए , अपने कर्मों द्वारा उसका अर्जन करे और अर्जन किए हुए धन का सद्उपयोग करे यही हम सभी के लिए महत्वपूर्ण है यदि ऐसा हो तो हमारे समाज में ही क्या समस्त विश्व में शांति की स्थापना हो सकती है।

परमात्मा सभी की साथ में रक्षा करें सभी प्राणियों का पोषण होता रहे , सभी को शक्ति मिले , सभी प्राणियों के पास काम हो सभी अपनी शक्ति के साथ कार्य करें सभी लोग तेजस्वी बने अच्छे से सभी पढ़े लिखे और सभी जनों का आपस में विद्वेष की भावना पाले , सभी प्राणियों के आपस में ईर्ष्याभाव न हो सभी का कल्याण हो !

ऊँ सह नाववतु ! सह नौ भुनक्तु सह वीर्यं करवावहै
तेजस्वि नावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ।
ऊँ शान्तिः ! शान्तिः ।। शान्तिः ।।।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः –

(1) बृहदारण्यकोपनिषद् अध्याय 5
(2) श्रीमद् भगवद्गीता अध्याय 16 , 2
(3) अभिज्ञानशाकुन्तल अंक 4
(4) शिवराजविजय
(5) वाल्मीकि रामायण उत्तरकाण्ड
(6) वाल्मीकि रामायण अरण्य काण्ड
(7) महाभारत
(8) ऋग्वेद
(9) यजुर्वेद , शिव संकल्प सूक्त , अध्याय – 34
(10) अथर्ववेद
(11) शुक्ल यजुर्वेद अध्याय , 33 , 24
(12) कठोपनिषद्
(13) अमृत बिन्दोपनिषद

❑